सूर के काव्य में प्रयुक्त राग–रागनियाँ

डॉ0 अनिता रानी
एसोसिएट प्रोफेसर–संगीत
श्रीमती बी.डी.जैन गर्ल्स पी.जी कालेज
आगरा।

महाकवि सूरदास हिन्दी साहित्य एवं संगीत के ऐसे दैदीव्यमान नक्षत्र हैं, जिनका प्रकाश कभी धूमिल नहीं हो सकता। महाकवि सूर उच्चकोटि के भक्त होने के साथ–साथ काव्यात्मक प्रतिभा के भी धनी थे। मानव जीवन, ज्ञान, इच्छा, और क्रिया– इनशक्तियों का संगम हैं, भावना ही ज्ञान और कर्म के बीच सम्बन्ध कराने वाली शक्ति है। मैनेजर पांडेय के अनुसार ''सूर भक्त कवि और शक्ति उनके काव्य का साध्य है। सूर के इष्ट देव श्रीकृष्ण है। भगवान की रसमयी लीलाओं की आत्मानुभूति की सहज अभिव्यक्ति ही सूरदास के काव्य के अन्तः प्रवृत्ति की विशेषता है।'' सूर का काव्य भक्तिमय है। उनका काव्य अनुभूतियों के उत्कर्ष की पराकाष्ठा है। जीवन उनके काव्य का प्रमुख गुण है। सूर की भक्ति भावना की एक बहुत बडी विशेषता है– उनका सहज सतत् विकासशील रूप। सूर की अभिव्यक्ति में भक्ति भावना, दास्य भावना, साख्य भावना, वात्सल्य भावना और माधुर्य भावना की भक्ति को पार करती हुई प्रेम भक्ति सिद्धावस्था में पहुँची, उनके भक्ति काव्य में भक्ति भावना के सभी रूप दृष्टिगोचर होते हैं। उनकी भक्ति सगुणधारा की है। इनकी रचनायें गेय तथा भक्ति भावना से ओत–प्रोत है। सूरदास जी ने कृष्ण चरित्र सम्बन्धी अनेक घटनाओं एवं इतिहास का वर्णन किया है। भक्ति कवि सूरदास की कृष्णमयी चेतना का काव्यरूप ही 'सूरसागर' है। सूरदास महान संगीतज्ञ, कृष्ण के अनन्यभक्त, विनम्र स्पश्ट वक्ता, सहज उपदेशक, सखा एवं महाकवि थे। सम्पूर्ण जीवन उन्होंने कृष्ण की लीला को अनेकानेक पदों में पिरोकर अर्पण किया।

हिन्दी काव्य जगत में सूरदास कृष्ण भक्ति की अगाध एवं अनंत भावधारा को प्रवाहित करने वाले कवि माने जाते हैं। इनके काव्य का मुख्य विषय कृष्ण भक्ति है। इन्होंने अपने काव्य में कृष्ण से जुड़ी विभिन्न लीलाओं का भिन्न–भिन्न ढंग से साख्य भक्ति का वर्णन किया है। आचार्य वल्लभाचार्य के शिष्य होने के कारण गुरू ने उन्हें श्रीमद् भागवत को आत्मसात कर लेने की शिक्षा दी थी। अतः अब यदि इनकी रचनाओं में श्रीमद् भागवत का प्रभाव लक्षित होता है, तो यह स्वभाविक ही है। इस सत्य के बावजूद इनके काव्य में इनकी मौलिक प्रतिभा के दर्शन होते हैं, इस तथ्य को हम इस प्रकार भी स्पष्ट कर सकते हैं कि कथावस्तु का आधार श्रीमद् भागवत है, तो काव्य उनका मौलिक है। जन्मान्ध होने के कारण उनका सारा ध्यान गुरू द्वारा बताये गये सिद्धान्तों पर था। और कृष्ण भक्त होने के कारण शक्ति ही बनी रहती थी। जीवन के प्रत्येक दर्शन को वे अपने ईष्टदेव की शक्ति में खोजते थे और सफलता भी प्राप्त करते थे।

सूर के सच्चे सुरों की बात ही निराली है, जिनके हृदय से श्याम की मंजूल मूर्ति क्षणभर को भी नहीं हटती–

''चलत चितवन, दिवस जगत, सुपन सावत रात
हृदय ते वे स्याममूर्ति, छिन न इत उत जात।''1

सूर ने अपने काव्यमय संगीत को हरिचरणों में समर्पित कर शास्त्रीय संगीत को दिव्य रूप प्रदान किया। महाकवि सूर उच्च कोटि के कवि होने के साथ–साथ काव्यात्मक प्रतिभा के धनी थे। डॉ0 हरवंश लाल शर्मा के अनुसार ''भक्ति और साहित्य के उन्मुक्त वायुमंडल में सूर की कल्पना ने व्यवहारिक ज्ञान और अनुभव के पंख खोलकर इतनी ऊँची उडान भरी कि दर्शकों को भी कभी–कभी यह आभास होता है कि वह किसी अन्य लोक की यात्रा कर रहे हैं।''2 सच तो यह है कि इतनी ऊँचाई को छूने के बाद भी उन्होंने अपनी जमीन नहीं छोड़ी। डॉ0 मनमोहन गौतम के मतानुसार ''कला का सम्बन्ध व्यक्तिगत प्रतिभा तथा निजी अभिरूची से है, फिर भी पूर्ववर्ती और समसामयिक कलाकारों का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव कवि की कत्पना के निर्माम में योग अवश्य देता है।''3

संगीत विद्या सर्वकालीन और सार्वदेशिक है। वह प्रेम, भक्ति तथा सम्मान की श्रेष्ठ विद्या है। हमारे देश में चाहे वह लोक शिक्षा हो अथवा उच्चतम ज्ञान की वाणी, सबके प्रचार का माध्यम संगीत ही रहा है।। भारतीय समाज का जीवन ही संगीतमय है। भारतीय संगीत में आत्मिक आनन्द का विशिष्ट स्थान है और संगीत के अतिरिक्त यह आत्मिक आनन्द और कोई माध्यम नहीं दे सकता, ओर आत्मा स्वयं आनन्द का स्रोत है क्योंकि यह परमात्मा से जुड़ी हुई है। समस्त संसार नाद के गुण से परिचित है। मानव जीवन की समस्त सौन्दर्य भावना मध्यकालीन भक्तकवियों के संगीत में साकार हो गई; क्योंकि वे महान कवि होने के साथ–साथ उच्चकोटि के गायक भी थे।

राग संगीत भारत की अपनी सम्पदा है, लावण्य इसका मूल है। इसी लावण्य के कारण बड़े–बड़े सन्त कवियों ने अपनी भावाव्यक्ति के लिए इस राग का आश्रय लिया। भिन्न–भिन्न राग, भिन्न–भिन्न भावों की अभिव्यक्ति करने में सहायक होते हैं। भक्त कवि सूर के रागों के लावण्य को पहचान कर अपने काव्य में तदानुकूल रागों का प्रयोग किया। सूर द्वारा राग–रागिनियाँ के प्रयोग पर विचार करने

से पूर्व राग का परिचय प्राप्त कर लेना अप्रासांगिक नहीं होगा। रागों के अनेकों विद्वानों ने अपने–अपने मतानुसार व्यक्त किया है। मंगतमुनि राग को कुछ ऐसे परिभाषित करते हैं–

"यो यः ध्वनि विशेषस्तु स्वर वर्ण विभूषितः।
रंजकों जन चिताना स राग उदाहृतः।।''

आचार्य कैलाशचंद्र देव बृहस्पति के शब्दों में–''जो राग स्थाई, आरोही, अवरोही, संचारी वर्णों से शोभन हो, वह सब कुछ जहॉ दिखायी देता हो, वे राग कहे गये हैं।''

इसी सन्दर्भ में अमल दाश शर्मा अपने भाव कुछ इस प्रकार प्रकट करते हैं–''मानव हृदय की अवस्था विशेष को राग कहते हैं। संगीत में राग से चितरंजक, संर, स्वर या विन्यास विशेष समझा जाता है।''

भारतीय साहित्य, संगीत एवं दर्शन में 'राग' की अपनी विशेषता है। राग शब्द रंज धातु से अनुस्थूत है, जिसका मुख्यार्थ है रंगना। संगीत में जो सुख एवं आनन्द प्रदान करे, वह रंजक है, जो आनन्द के रंग में रंग दे वह राग है। संगीत में राग दो अर्थों में प्रयुक्त होता है, एक सामान्य और दुसरा विशेष।

डॉ0 प्रेमलता शर्मा के विचारानुसार–''सामान्य अर्थ में राग रंजकता का वाचक है और विशेष अर्थ में वह ऐसे नादमय व्यक्तित्व का द्योतक है, जो स्वर देह और भाव देह से समन्वित हो।'' राग भारतीय संगीत का आधार है। भारतीय संगीत का पूर्णरूप रागों द्वारा ही प्रदर्शित होता है। राग की उत्पत्ति के विषय में कुछ विवरण प्राप्त नहीं हैं। श्री के0 जी0 गिर्डे के मतानुसार–''यह कहना कठिन है कि राग कब अस्तित्व में आया, फिर भी राग शब्द का उसके तकनीकी अर्थ में प्रथम प्रयोग कविकुल गुरू कालीदास ने अपने नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तलम' के प्रथम दृश्य के आमुख में किया है।''4

भारतीय अवधारणा के अनुसार–राग का सृजन शंकर जी ने किया। शिव शक्ति दोनों के योग से राग उत्पन्न हुआ। भारतीय संगीत के प्रथम आचार्य भरत ने अपने प्रथम ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में राग का कोई उल्लेख नहीं किया है, अपितु जाति का वर्णन किया है जो राग के समान ही थी। राग की प्रथम व्याख्या मतंगमुनि ने बृहद्देशी में की जो ईसा के बाद छठी शताब्दी में प्रचार में आये। जाति का ही परिमार्जित और विकसित रूप–राग है। आचार्य भरत ने जाति के दस मूल लक्षण कहे हैं, जो राग के लियें भी यथावत मान्य हैं। भरत मुनि के शब्दों में–

''ग्रहाशों तार मन्दों च न्यासौ पन्यास एव च।
अल्पत्वं च बहुत्व च पाडवांडुपित तथा।।''5

अर्थात ग्रह, अंश, तार, मंद न्यास, अपन्यास, अल्पतत्व, बहुत्व, षाडवित और औडवित दस लक्षण हैं। प्रकृति की वंदना तथा परमेश्वर की आराधना भारतीय संगीत की उत्पत्ति का मूल आधार है। प्राचीन काल से लेकर आज तक अध्ययन और व्यवहार की सरलता के लिए रागों का भिन्न–भिन्न रूपों में वर्गीकरण हुआ। सर्वप्रथम जाति वर्गीकरण, ग्राम वर्गीकरण, दसविध राग वर्गीकरण, शुद्ध छायालग, संकीर्ण वर्गीकरण, मेलराग वर्गीकरण हुआ। मध्यकाल में राग–रागिनी के एक लम्बे चौडे परिवार की रचना की। उस परिवार में स्त्री–पुरूष, पुत्र, पुत्रवधू के अतिरिक्त नपुंसक रागों की भी कल्पना की गई है। विधि–विधान से राग–रागिनियों का विकास जिन संगीताचार्यों द्वारा हुआ, उनमें ब्रह्मा, भरत, हनुमान, कल्लिनाथ और सोमेश्वर आदि प्रमुख हैं।

गान क्रिया का रूप हमेशा परिवर्तनशील रहा है। ग्राम, मूर्च्छना, फिर जाति, फिर राग इस तरह यह गान रूप भिन्न–भिन्न नामों से थोडे अंतर के साथ बदलते गये। रागों की संख्या बढ़ाने के लिए उनके अनेक रूपों की कल्पना संगीत विद्वानों ने की। उस कल्पना में राग–रागिनी की कल्पना सर्वोपरि है। राग–रागिनी वर्गीकरण में मुख्य चार पद्धतियॉ मान्य हैं–

1. भरतमत
2. कृष्णमत
3. शिवमत अथवा सोमेश्वर मत
4. ब्रह्म मत

राग वर्गीकरण सोलहवीं शताब्दी में प्रचलित हो चुका था। सूरदास ने इस वर्गीकरण को मान्यता दीं उन्होंने अपने पदों को उस काल की प्रचलित राग–रागिनियों में ही बांधा है। राग–रागिनियों के उचित प्रयोग के साथ–साथ संगीत की पारिभाषिक शब्दावली का सुन्दरतम विवेच्य सूर ने किया है, यह उनके गहन संगीत ज्ञान का परिचायक है।

सूरदास जी ने शुद्ध रागों के साथ–साथ मिश्र रागों का प्रयोग जितने विस्तार से किया है, उतने विस्तार से अन्य किसी भक्तिकालीन कवि ने नहीं किया है। सूर–सागर में रागों का विस्तृत व्यवहार मिलता है।

सोलहवीं शताब्दी में जब महाकवि एवं भक्त गायक सूरदास अवतरित हुये, उस समय कृष्ण भक्ति परम्परा में शास्त्रीय संगीत का व्यापक प्रचार था। राग–रागिनियॉ भजन कीर्तन का मुख्य आधार थी।

डॉ0 ऊषा गुप्ता के कथानुसार ''पुष्ट संगीत ज्ञान, पुष्टीय मार्गीय सेवा मेंराग–विधान की आवश्यकता और वृदावन के संगीतात्मक वातावरण के कारण सूरदास की पद रचना में शास्त्रीय संगीत का सम्यक समावेश हो गया है।''6

राग सम्पूर्ण भारतीय संगीत को प्रतिबिम्बित करने का श्रेष्ठ माध्यम है। राग की उत्पत्ति के विषय में कोई विशेष विवरण प्राप्त नही होता। भारतीय अवधारणा के अनुसार के पांच राग पंचानन महादेव जी के पांच मुख से अनुस्यूत माने गये हैं। छठा राग पार्वती जी के मुख से उत्पन्न हुआ। वास्तव में राग की उत्पत्ति थोडे समय की देन नहीं है। जिस प्रकार भाषा विकसित हुई, उसी प्रकार राग

का भी विकास हुआ होगा। राग की उत्पत्ति थाट से होती है और रचनावादी, संवादी, रागों का समय क्रम तथा रस को ध्यान में रखकर की जाती है।

महाकवि सूर परमभक्त होने के साथ–साथ रस सिद्ध गायक तथा महान संगीतज्ञ थे। सूर ने राग के समस्त नियमो का पालन किया। उस युग में भरतोक्त छः राग और छत्तीस रागनियों का प्रचलन हो चुका था। सूर ने इस वर्गीकरण को मान्यता दी है।7

सूर सागर में प्रयुक्त राग–रागनियों की संख्या 87 है। अनेक रागों के नामों की पुनरावृत्ति हुई है। सूर के द्वारा प्रयुक्त रागों की सूची देखने से ज्ञात होता है कि कहीं–कहीं पर उन्होंने गायन शैली के आधार पर भी राग नाम अंकित किया है जैसे होरी–धमार आदि। अनेक जगह राग–रागनियों का प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ–

1. राग–रागनी प्रकट दिखाओं गायो जिंही रूप।8

2. राग–रागनी मर तिवंत।9
3. नाना राग–रागनी गावत, धरै अमृत मृदु बैननिये।10

सूर एक प्रतिभा सम्पन्न संगीतकार थे। संगीतज्ञ कवि स्वरों के चमत्कार द्वारा अपने भावों को प्रकाशित करता है। वह स्वरों की प्रकृति को समझता है। उसमें स्वरों के साथ भावना को साक्षात करने की क्षमता होती है। संगीत के सात स्वरों का क्षेत्र इतना व्यापक है कि उससे परे कुछ है ही नहीं। संगीत कवि की मनोवृत्ति तो स्वरों की प्रकृति में रमती है। अपनी आन्तरिक भावनाओं को शब्द रूप देने से पूर्व वह संगीत के स्वरों को गुनगुनाता है। उसकी स्वर साधना में इतनी शक्ति होती है कि यदि वह चाहे तो शब्दों के प्रयोग के बिना भी अपनी अनुभूति का ज्ञान श्रोताओं को करा सकता है। सूर जैसे संगीत के मनोकूल भावों को प्रकट करने का एकमात्र माध्यम राग–रागिनी ही थे। उनके द्वारा प्रयुक्त रागों को जब पद के भावानुसार देखा जाये, तो ज्ञात होता है कि रागों और पदों का आन्तरिक सम्बन्ध सर्वथा उचित बन पडता है। पद का विषय और रस, राग की प्रकृति के अनुकूल है।

संदर्भ सूची

1. आचार्य प्रपन्नाचार्य–सूरदास का संगीत कला विहार सितम्बर 1980ई0 , पृ0सं0 29
2. डॉ0 हरवंश लाल शर्मा–सूर ओर उनका साहित्य, पृ0सं0 251
3. डॉ0 मनमोहन गौतम–सूर की काव्यकला, पृ0सं0 256
4. के0जी0 गिडें–मूल थाठ, राग रागिनियां और रास,संगीत निबंध, पृ0सं0 368
5. आचार्य भरत– नाट्य शास्त्र, 28/70
6. डॉ0 उषा गुप्ता– हिन्दी के कृष्ण भक्तिकालीन साहित्य में संगीत
7. इक इक नीकै गावैरी–सूर–सागर, पद संख्या 1856, पृ0सं0 698
8. सूर–सागर, पद संख्या 1762, पृ0सं0 653
9. सूर–सागर, पद संख्या 1798, पृ0सं0 653
10. सूर–सागर, पद संख्या 1783, पृ0सं0 738
11. मैनेजर पंडित–कृष्ण काव्य की परम्परा और सूरदास का काव्य, पृ0सं0 170
12. डॉ0 गिरधर प्रसाद शर्मा–मध्य युगीन किन्दी काव्य का विवेचन, पृ0सं0 102
13. डॉ0 गिरजा शरण अग्रवाल–मीना अग्रवाल, चितरंजन कुमार चर्चिल/साहित्य हिन्दी सौरभ, पृ0सं0 225 डॉ0 मिथिलेश कुमारी सिन्हा–महाकवि सूरदास और उनका काव्य पृ0सं0 281
14. के0जी0 गिडें–मूल थाठ, राग रागिनियां और रास,संगीत निबंध, पृ0सं0 368